International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

''रमेश पोखरियाल 'निशंक' के काव्य में संस्कृति एवम् सांस्कृतिक चेतना''

वन्दना, शोधार्थी, हिन्दी विभाग, हिमालयन गढ़वाल विश्वविधालय, उत्तराखण्ड
डॉ ब्रजलता शर्मा, ऐसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, हिमालयन गढ़वाल विश्वविधालय, उत्तराखण्ड

सार

संस्कृति शब्द स्वयं में व्यापक दृष्टिकोण रखता हे। इस एक शब्द से मानवजाति के विचार, संस्कार, भाषा, धर्म, रहन–सहन, खान–पान, कार्य–व्यवहार, अर्थ, राजनीति आदि का विशद बोध होता है। विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में भारतीय संस्कृति का स्थान सर्वोपरि है। यद्यपि भारत रंग–बिरंगा उपवन है, जिसमें विविध वर्णी जाति व भाषायी फूल खिलते हैं किन्तु पूर्व से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण तक यह देश एक ही संस्कृति को जीता है। डॉ. रामधारी सिंह दिनकर का मत है कि– ''भारत की संस्कृति आरंभ से ही सामाजिक रही है। उत्तर–दक्षिण, पूर्व, पश्चिम, देश में जहाँ भी जो हिन्दू बसते हैं, उनकी संस्कृति एक है एवं भारत की प्रत्येक क्षेत्रीय विशेषता हमारी इसी सामाजिक संस्कृति की विशेषता है। तब हिन्दू एवं मुसलमान हैं, जो देखने में अब भी दो लगते हैं। किन्तु उनके बीच भी सांस्कृतिक एकता विद्यमान है, जो उनकी भिन्नता को कम करती है।''

प्रमुख शब्द : व्यापक दृष्टिकोण, संस्कृति शब्द, पालन–पोषण, मानवजाति, उत्पत्ति, सांस्कृतिक चेतना

परिचय

पंडित जवाहरलाल नेहरू के संस्कृति के संबंध में विचार यहाँ उद्धृत करना समीचीन होगा। वे विस्तार से लिखते हैं कि– ''संस्कृति है क्या? शब्दघोष उलटने पर इसकी अनेक परिभाषाएँ मिलती हैं। एक बड़े लेखक का कहना है कि–'' संसार भर में जो भी सर्वोत्तम बातें जानी या कही गयी हैं, उनसे अपने आपको परिचित करना संस्कृति हैं।'' एक दूसरी परिभाषा में यह कहा गया है कि ''संस्कृति शारीरिक या मानसिक शक्तियों का प्रशिखण दृढ़ीकरण या बिन्दास अथवा उससे उत्पन्न अवस्था है।'' यह मन आचार अथवा रूचियों को परिष्कृति या शुद्धि है।'' यह सभ्यता का भीतर से प्रकाशित हो उठना है। इस अर्थ में, संस्कृति कुछ ऐसी चीज का नाम हो जाता है जो बुनियादी और अन्तर्राष्ट्रीय है। फिर, संस्कृति के कुछ राष्ट्रीय पहलू भी होते हैं और इसमें कोई संदेह नहीं कि अनेक राष्ट्रों ने अपना कुछ विशिष्ट व्यक्तित्व तथा अपने भीतर कुछ खास ढंग के मौलिक गुण विकसित कर लिए हैं।''

भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ बतलाते हुए श्री नेहरू आगे लिखते हैं कि– ''इस नक्शे में भारत का स्थान कहाँ पर है? कुछ लोगों ने हिन्दू–संस्कृति, मुस्लिम–संस्कृति, ईसाई–संस्कृति, की चर्चा की है। ये

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

नाम मेरी समझ में नहीं आते, यद्यपि यह सच है कि जातियों और राष्ट्रों की संस्कृतियों पर बड़े–बड़े धार्मिक आंदोलनों का असर पड़ा है। भारत की ओर देखने पर मुझे लगता है, जैसा कि दिनकर ने भी जोर देकर दिखलाया है कि भारतीय जनता की संस्कृति का रूप सामाजिक है और उसका विकास धीरे–धीरे हुआ है। एक ओर तो इस संस्कृति का मूल आर्यों से पूर्व, मोहन जोदड़ो आदि की सभ्यता तथा द्रविड़ों की महान सभ्यता तक पहुँचता है। दूसरी ओर इस संस्कृति पर आर्यों की बहुत ही गहरी छाप है, जो भारत में मध्य एशिया से आये थे। पीछे चलकर यह संस्कृति उत्तर–पश्चिम से आने वाले तथा फिर समुद्र की राह से पश्चिम से आने वाले लोगों से बार–बार प्रभावित हुई। इस प्रकार, हमारी राष्ट्रीय संस्कृति में धीरे–धीरे बढ़कर अपना आकार ग्रहण किया। इस संस्कृति में समन्वयन तथा नये उपकरणों को पचाकर आत्मसात् करने की अद्‌भुत योग्यता थी जब तक इसका पद गुण शेष रहा, यह संस्कृति जीवित और गतिशील रही। लेकिन बाद में आकर इसकी गतिशीलता जारी रही, जिससे यह संस्कृति जड़ हो गयी और उसके सारे पहलू कमजोर पड़ गये। भारत के समग्र इतिहास में हम दो परस्पर–विरोधी और प्रतिद्वंद्वी शक्तियों को काम करते देखते हैं। एक तो वह शक्ति है जो बाहरी उपकरणों को चाकर समन्वय और सामंजस्य पैदा करने की कोशिश करती है, और दूसरी वह जो विभाजन को प्रोत्साहन देती है, जो एक बात को दूसरी से अलग करने की प्रवृत्ति को बढ़ती है। इसी समस्या का एक भिन्न प्रसंग में हम आज भी मुकाबला कर रहे हैं। आज भी कितनी ही बलिष्ठ शक्तियाँ हैं जो केवल राजनैतिक ही नहीं, सांस्कृतिक एकता के लिए भी प्रयास कर रही हैं। लेकिन ऐसी ताकतें भी हैं तो जीवन में विच्छेद डालती हैं, जो मनुष्य–मनुष्य के बीच भेद–भाव को बढ़ावा देती है।''

संस्कृति का अर्थ एवं स्वरूप

किसी देश या राष्ट्र का प्राण उसकी संस्कृति है क्योंकि यदि उसकी कोई संस्कृति नहीं तो संसार में उसका अस्तित्व ही क्या? यह अंग्रेजी शब्द कल्वर का हिन्दी अनुवाद है जो लेटिन भाषा के कल्वर शब्द से बना है और इसका प्रयोग कल्वर के लिए होता है। संस्कृति चित्तभूमि की खेती है। इसकी शाब्दिक व्याख्या दो प्रकार से की जाती है। प्रथम– संस्कृति शब्द की उत्पत्ति 'संस्कृत' से मानी जाती है, जिसका अर्थ है– 'शुद्धिकरण' या 'शुद्धिक्रिया'। समाजशास्त्रीय भाषा में शुद्धि क्रिया का तात्पर्य सामाजिकता से है।

द्वितीय– 'सम्' उपसर्गपूर्वक 'कृ' धातु से भूषण अर्थ में 'सुट' आगमपूर्वक क्तिन् प्रत्यय होने से संस्कृति शब्द सिद्ध होता है। इसका अर्थ है मानव का वह कार्य जो भूषण स्वरूप– अलंकार स्वरूप है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

मनुष्य के द्वारा किये जाने वाले ऐसे कार्य जिससे लोग उसे अलंकृत और सुसज्जित समझें। उन कार्यों का नाम है संस्कृति। प्रकारान्तर से संस्कृति शब्द का शुद्ध अर्थ है 'धर्म'।

संस्कृति से आशय सीखे हुए व्यवहार की वह समग्रता है, जिसमें एक बच्चे का व्यक्तित्व पलता और पनपता है। यह मानव जीवन का वह पहलू है जिसके कारण एक ओर जहाँ विभिन्न मनुष्यों में समानताएँ दृष्टिगोचर होती हैं वहीं दूसरी ओर हर मानव समूह दूसरे से भिन्न दिखाई देता है। यह संस्कृति ही हैक जो हमें समूह में बांधे रखती है और हमारी व्यक्तिगत विविधताओं को समाप्त करने का प्रयास करती है। संस्कृति एक जीवन शैली है एक समूह की विशेषता है। वह मान्यता, दृष्टिकोण तथा लोगों की सहभागिता एवं व्यवहारिकता व प्रतिमान का एक संग्रह है।

''संस्कृति बंधनों में पलकर नहीं चलती। भारतीय संस्कृति के आधार और स्वरूप में जड़ता नहीं है। इसमें लचीलापन है। विदेशी संस्कृति में भी यदि कुछ अच्छा परिलक्षित होता है तो उसे हम स्वीकार कर लेते हैं। संस्कार, संस्कृत और संस्कृति। तीन समानधर्मी शब्द लोक में प्रचलित हैं। संस्कार उन पवित्र और उदात्त विचारों एवं कार्यों के सूचक हैं, जो जीवन को व्यवस्थित बनाते हैं और सद्गति प्रदान करते हैं। संस्कार शोधक या परोपकार करने की एक विशेष पद्धति है, जिसे इस पद्धति द्वारा परिष्कृत कर दिया गया है, वह संस्कृति है और परोपकार करने की प्रेरणा शक्ति ही संस्कृति है। यजुर्वेद में भी संस्कृति को सृष्टि माना गया है जो विश्व में वरण करने योग्य अथवा विश्व का उन्नयन करने वाली है।

संस्कृति का संबंध मानव जीवन के समस्त पक्षों से होता है। प्रत्येक समाज में जीवन यापन करने के अलग–अलग ढंग, तौर–तरीके, रीति–रिवाज, रहन–सहन एवं विधि–विधान पाये जाते हैं, जिन्हें संस्कृति के रूप में जाना जाता है। प्रत्येक मानव की कुछ मूलभूत शारीरिक तथा मानसिक आवश्यकताएँ होती हैं, जिनकी पूर्ति वह भौतिक और अभौतिक साधनों या उपकरणों द्वारा करने की चेष्टा करता है। भौतिक व अभौतिक सभी साधन या उपकरण संस्कृति के अंग होते हैं। हमारी संस्कृति धर्म प्रधान है परंतु यहाँ धर्म ने कभी भी यूरोप की भाँति बौद्धिक स्वतंत्रता पर प्रतिबंध नहीं लगाया। विचारों की स्वतंत्रता भारतीय संस्कृति की विशेषता है। इसी स्वतंत्रता ने हमको विभक्त भी किया और इसी ने भारतीय संस्कृति को संश्लेषण की शक्ति प्रदान की जिसने इस देश तथा इसकी संस्कृति को टूटने से बचाया।

संस्कृति की प्रकृति और विशेषताएँ

संस्कृति की निम्नलिखित विशेषताएँ उसकी प्रकृति को भी स्पष्ट करती है–

1. संस्कृति एक सुसंगठित एवं क्रियात्मक व्यवस्था है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

2. संस्कृति को सीखा जाता है।
3. संस्कृति मनुष्य को अन्य प्राणियों से अलग करती है एवं सम्पूर्ण प्राणी जगत् में इसका स्वामित्व स्थापित करती है।
4. संस्कृति में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है, इस प्रकार मनुष्य परिवर्तनशील पर्यावरण के अनुकूल अपना जीवन यापन करता है।
5. संस्कृति एक व्यक्ति द्वारा निर्मित नहीं होती, बल्कि इसमें कई लोगों की भागीदारी होती है।
6. यह एक अनुकूल प्रणाली है।
7. यह मनुष्य की जैविक एवं गौण आवश्यकताओं को पूरा करती है।
8. संस्कृति एवं पर्यावरण अपृथ्क्करणीय रूप से जुड़े हैं।
9. संस्कृति की उत्पत्ति मनुष्य की जैविक विशेषताओं के कारण संभव हो सकती है। फिर भी इसे अधिजैव माना जाता है।
10. संस्कृति सामाजिक आनुवंशिकता है।
11. यह मनुष्य के व्यक्तित्व को तरासती है तथा उसमें सामाजिक आदर्श एवं मूल्य अन्तर्निविष्ट करके उसे एक सामाजिक प्राणी बनाती है।
12. संस्कृति में संचारित या हस्तान्तरण होने का गुण है।
13. संस्कृति प्रत्येक समाज में एक विशेष प्रकार की होती है।
14. समूह के लिए संस्कृति आदर्श होती है।
15. संस्कृति अतिवैयक्तिक तथा अधिसावयव है।

मानव के समूचे जीवन पर संस्कृति का गहरा प्रभाव होता है। सच तो यह है कि मनुष्य से यदि उसकी संस्कृति छीन ली जाए तो उसके पास जो कुछ शेष रहेगा वो मानव के अनुकूल नहीं होगा।

सांस्कृतिक संघर्ष

जब एक संस्कृति का दूसरी संस्कृति के साथ संघर्ष होता है अथवा दो भिन्न संस्कृतियों के बीच होने वाले संघर्ष को सांस्कृति संघर्ष कहते हैं। जब कभी किसी समाज में विभिन्न धर्म तथा भिन्न–भिन्न सामाजिक मूल्यों, आदर्शों एवं नियमों वाले समूह बाहर से आकर बस जाते हैं। जब इन बाह्य सांस्कृतिक समूह का उस समाज की भौतिक संस्कृति के साथ संघर्ष होता है ऐसी स्थिति में एक संस्कृति दूसरी संस्कृति को पूर्णतः निगल लेना चाहती है तथा समाज में अपना प्रभुत्व जमाना चाहती है। अतः ऐसे

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

सांस्कृतिक संघर्ष से मुख्यतः यह भय होता है किकहीं बाह्य नवीन संस्कृति प्राचीन संस्कृति का स्थान न ग्रहण कर ले और प्रचलित संस्कृति का अस्तित्व समाप्त हो जाये।

सांस्कृतिक विसंयुजता या उभयवृत्तिता

सांस्कृति विसंयुजता या उभयवृत्तिता का तात्पर्य दो संस्कृतियों के उपस्थित होने पर संस्कृति के साथ वैयक्तिक समायोजन, सामंजस्य या अनुकूलन न कर सकने की स्थिति या दशा से होता है। किसी भी समाज में व्यक्ति अपनी आवश्यकता एवं व्यक्तित्व की सफलता के लिए प्रचलित लोकाचारों, प्रथाओं, परम्पराओं आदि की उपयोगिता के आधार पर उनके साथ समायोजन कर लेता है, किन्तु जब व्यक्ति को अपने समाज की संस्कृति के साथ–साथ और अन्य दूसरे समाज की संस्कृति के साथ अपने ही समाज में सामना करना पड़ता है या उसके साथ समायोजन करना होता है, जब वैयक्तिक रूप से व्यक्ति समायोजन या अनुकूलन करने में असफल हो जाते हैं। इसी स्थिति को सांस्कृति विसंयुजता या उभयवृत्ति कहते हैं।

संस्कृति और समाज

समाज संस्कृति और व्यक्ति, मानव व्यवहार के तीन मुख्य आधार हैं तथा ये तीनों अन्यान्याश्रित होते हैं। व्यक्ति में समाज और संस्कृति दोनों समाहित रहते हैं। मानव व्यवहार एक ओर समूहों से प्रभावित होता है तो दूसरी ओर संस्कृति से। समाज वस्तुतः संस्कृति का आधार है क्योंकि समाज से ही संस्कृति पनपती है और सामाजिकता संस्कृति का एक गुण होता है। इसी प्रकार मानव व्यवहार का वास्तविक आधार संस्कृति है क्योंकि संस्कृति के अनुरूप ही मानव समाज में व्यवहार करता है। संस्कृति के द्वारा ही समाज का अस्तित्व सम्भव होता है और समाज के द्वारा संस्कृति का अस्तित्व बना रहता है। इस प्रकार मानव में संस्कृति समाज से परे है और समाज संस्कृति से परे है। अतएव स्पष्ट है संस्कृति और समाज में अत्यन्त घनिष्ट संबंध है। संस्कृति समाज में मानव जीवन की विधि है और समाज में इन जीवन विधियों का पालन करते हुए व्यक्ति अपना जीवन यापन करता है।

सभ्यता और संस्कृति

सभ्यता का अर्थ है समाया, समाज में रहने, सामाजिक रहने की योग्यता अर्थात् सामाजिकता। सभ्यता सामाजिक विधि अर्थात् कर्तव्यता एवं सामाजिक निषेध अर्थात् बन्धन पर जोर देती है। सभा में शिष्टाचार के नियम का पालन किया जाता है, सामाजिक भावना का अनुभव किया जाता है, अतएव सभ्यता शब्द शिष्टाचार के नियमों के साथ ही सामाजिक उत्तरदायित्व, सामाजिक बन्धन एवं सामाजिक व्यवहार का भी निर्देश करता है। सभ्यता शब्द का सम्बन्ध नागरिकता से भी है। ग्राम की अपेक्षा नगर में विभिन्न वर्ग के

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

कहीं अधिक लोगों को सुख शांतिपूर्वक रहना पड़ता है। ग्रामीणों की अपेक्षा नागरिक अधिक शिक्षित, अधिक संगठित और अधिक सभ्य होते हैं। मौलिक दृष्टि से जो यह अन्तर था, वह धीरे–धीरे व्यापक हो गया। जो व्यक्ति सांस्कृतिक एवं बौद्धिक विकास की दृष्टि से अधिक उन्नत थे, वे अपने आपको सभ्य समझने लगे एवं जो उतने उन्नत नहीं थे, उनसे अपने आपको पृथक, समझने लगे। इस प्रकार से सभ्यता शब्द का अर्थ हो गया विशिष्ट बौद्धिक विकास, उच्च नैतिक विचार एवं भौतिक सुख–समृद्धि। इनमें भौतिक उन्नति, व्यापारिक और औद्योगिक विकास, सामाजिक स्वतंत्रता, राजनैतिक प्रगति का भी समावेश होता है। इस प्रकार से इसका लक्ष्य है मनुष्य को अधिक सुखी और समृद्ध बनाना, अधिक शिष्ट और सभ्य बनाना तथा जिस अवस्था में है उससे अधिक उन्नत बनाना। इसके गुणों में इसका समावेश है कि व्यक्ति एवं प्रकृति पर विजय प्राप्त करना, काल और स्थान की दूरी दूर करना, भूतल पर विद्यमान नवीन देशों का अन्वेषण करना आदि। संगठित प्रयन्त द्वारा मनुष्य की उन्नति करना इसका परिणाम है। इसी आधार पर जो राष्ट्र, जो देश अधिक प्रगतिशील हुए, जो देश सभ्य कहलाने लगे, उन्होंने अपने उपनिवेशों की स्थापना को न्यायसंगत समझा।

सभ्यता शब्द 'सभ्य' से बना है जो कि सभा में 'यत्' प्रत्यय लगने से बनता है। प्राचीन काल में सभा के योग्य संस्कृत एवं विशिष्ट व्यक्ति को सभ्य कहा जाता था। आधुनिक युग में सभ्यता से तात्पर्य आविष्कारों, उत्पादन के साधनों एवं सामाजिक, राजनैतिक संस्थाओं से समझना चाहिए, जिनके द्वारा मनुष्य की जीवन यात्रा सरल हो जाती है। इसके विपरीत मानव व्यक्तित्व और जीवन को अप्रत्यक्ष रूप से समृद्ध बनाने वाली चिन्तन तथा कलात्मक सृजन की क्रियाओं को संस्कृति कहा जाता ळें 'सभ्यता को शरीर और संस्कृति को आत्मा भी कहा जाता है। जब तक शरीर में आत्मा है तभी तक उसका महत्व है। संस्कृति की आत्मा के बिना सभ्यता का शरीर शव की भाँति निष्प्राण रहता है। सभ्यता जहाँ जीवित रहने की योग्यता के अर्थ में उपयोगिता की द्योतक है वहाँ संस्कृति मनुष्य की पूर्णता की दृष्टि की दृष्टि से मूल्यों की खोज है। मनुष्य अपनी बुद्धि का प्रयोग कर विचार और कर्म के क्षेत्र में जो सृजन करता है उसी को संस्कृति कहते है। अपनी बौद्धिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मनुष्य प्रकृति के साधनों का जिस ढंग से प्रयोग करता है उससे उसकी सभ्यता का निर्माण होता है। इस प्रकार संस्कृति और सभ्यता का कार्यक्षेत्र मानव समाज ही है। दोनों का प्रादुर्भाव एवं विकास व्यक्ति और समाज के लिए होता है। दोनों का उद्देश्य मानव को उन्नति की ओर ले जाना ही है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

संस्कृति और सभ्यता में अंतर

साधारणतया प्रयोग में संस्कृति और सभ्यता में अन्तर नहीं किया जाता है। वस्तुतः देखा जाए तो साहित्य में भी ये प्रायः समानार्थक के तुल्य ही प्रयुक्त होते हैं। किन्तु किसी जाति और राष्ट्रीय संस्कृति और सभ्यता का ठीक–ठाक माप करने के लिए आवश्यक है कि दोनों के मौलिक अन्तर को स्वीकार किया जाये। यह ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है कि संस्कृति बौद्धिक विकास की अवस्थाओं को सूचित करती है और सभ्यता का परिणाम शारीरिक एवं भौतिक विकास है। संस्कृति का संबंध आत्मा से है और सभ्यता का संबंध कर्म कलाप से है।

यह साधारण अनुभव में देखा गया है कि एक व्यक्ति, जहाँ तक विचारने और अनुभव करने का संबंध है, एक प्रश्न पर युक्तियुक्त विचार तो करता है, परंतु जहाँ तक कर्तव्य का संबंध है वह अविचारपूर्ण ढंग से उस पर आचरण करता है। इस अंतर के कई कारण हैं। सबसे प्रमुख एक कारण यह है कि विचारक और श्रमिक दो विभिनन वर्गों में विभक्त हैं। विधान निर्माता और राज्याधिकारी दोनों के कर्तव्य विभिनन हैं तथा दोनों का कार्यक्षेत्र समान ही है। इसलिए किसी समाज की सांस्कृति अवस्था और सभ्यता का ठीक निर्णय करने के लिए आवश्यक है कि उसके पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और कला–विषयक कार्यों का परीक्षण किया जाए। पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने अपनी पुस्तक ''भारत एक खोज'' में इस अंतर को यह कहते हुए स्वीकार किया है कि ''समृद्ध सभ्यता में संस्कृति का विकास होता है और उससे दर्शन, साहित्य, नाटक, कला, विज्ञान, और गणिक विकसित होते हैं। ''इस प्रकार संस्कृति बौद्धिक उन्नति का पर्यायवाची है और सभ्यता भौतिक विकास का समानार्थक है। सभ्यता बाह्य क्रियात्मक रूप है और संस्कृति विचारधारा, सभ्यता अर्थात् भौतिक विकास में परिणत की जाती है। सांस्कृति अवस्था तथा सभ्यता व्यष्टि एवं समष्टि दोनों में सर्वदा परिवर्तनशील है। ये प्रत्येक युग, प्रत्येक देश एवं काल में बदलते रहते हैं और किसी भी नियम श्रृंखला में बद्ध नहीं होते हैं।

संस्कृति व अन्य विषय

पंडित नेहरु 'संस्कृति के चार अध्याय' की भूमिका में लिखते है कि– सभ्यता यदि संस्कृति का आधिभौतिक पक्ष है, तो भारत में इस पक्ष का अधिक विकास आर्यों ने किया है। इसी प्रकार, भारतीय साहित्य के भीतर भावुकता की तरंग, अधिकतर आर्य–स्वभाव के भावुक होने के कारण बढ़ी। किन्तु, भारतीय संस्कृति की कई कोमल विशिष्टताएँ, जैसे अंहिसा, सहिष्णुता और वैराग्य–भावना, द्रविड़–स्वभाव के प्रभाव से विकसित हुई हैं। यह देश आर्यों के आगमन के पूर्व से ही अहिंसक, अल्पसंतोषी और सहिष्णु रहता आया

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

था। आर्यों ने आकर भौतिक जीवन की धूम मचा दी, प्रवृत्ति और आशावाद के स्वर से सारे समाज को पूर्ण कर दिया। किन्तु, जब उनका यज्ञवाद भोगवाद का पर्याय बनने लगा और आमिषप्रियता से प्रेरित ब्राह्मण जीव–हिंसा को धर्म मानने लगे, इस देश की संस्कृति यज्ञ और जीव–घात, दोनों से विद्रोह कर उठी। महावीर और बुद्ध भारत की इसी सनातन संस्कृति के उद्घोष थे। अति का उत्तर बराबर अति तक पहुँच कर रुकता है। यदि आर्यों का यज्ञवाद खुल्लमखुल्ला, जीव–हिंसा को औचित्य प्रदान नहीं करता अथवा ब्राह्मण यदि धर्म को अपनी भोग–लोलुपता का साधन नहीं बनाते अथवा यदि उन्होंने यह भाव कायम रखा होता कि जन्मना श्रेष्ठ होने के लिए भी ब्राह्मण को ब्राह्मणत्व पर आरूढ़ रहना चाहिए, तो वैदिक धर्म के प्रति उठने वाले विद्रोह कटुता तक नहीं पहुँचते, न निवृत्तिवादी विचार–धारा को उतनी शक्ति प्राप्त होती, जितनी शक्ति उसे जैन और बौद्ध मतों से प्राप्त हुई।

धर्म और संस्कृति – धर्म शब्द शास्त्र की पद्धति के अनुसार धारणार्थक 'धृ' धातु में 'मन्' प्रत्यय के योग से बनताक है, जिसका अर्थ है– जो दूसरों द्वारा धारण किया जाये वही धर्म है। 'धर्म' शब्द का अर्थ अत्यन्त व्यापक है। देवर्षि नारद ने सत्य, दया, तपस्या आदि तीस सामान्य धर्म बतलाए हैं। मनु के अनुसार धृति, क्षमा, दंभ, अस्तेय, शौच, संयम, धी, विद्या, सत्य और अक्रोध ये धर्म के दस लक्षण हैं। ये दस लक्षण विचार और आचार की पुनीतता पर बल देते हैं। ऐसा लगता है कि धर्म का अर्थ– कर्तव्य है। संस्कृति मानव कर्तव्य–अकर्तव्य का बोध कराकर कर्तव्य की ओर उन्मुख करती है। धर्म में सभी मानवीय मूल्यों का समावेश है, इसलिए यह सर्वोच्च जीवन–मूल्य है।

धर्म और संस्कृति सदैव मानव को ऊँचा उठाने का प्रयन्त करते हैं, पशुता में गिरने से बचाते हैं। धर्म और संस्कृति का स्थान पूजापाठ या मंदिरों में नहीं है, अपितु वे हमारे प्रत्येक श्वास, प्रत्येक क्षण, प्रत्येक पग के साथ हैं।....शरीर और आत्मा को शुद्ध बनाए रखने के लिए कर्तव्य अनिवार्य है; वही धर्म है। संस्कृति का लक्ष्य भी मानव को 'असत्' से बचाकर 'सत्' की प्राप्ति कराना है और धर्म भी उसे अधर्म से बचाता हुआ 'सत्य' तक ले जाता है। जो मन का सत्य है, वह वाणी का सत्य हो और जो मन–वाणी का सत्य है वही कर्म का भी सत्य बना हो। इस प्रकार का सत्य या धर्म विश्व का सच्चा आलोक है। मानव जाति को संयमित; नियमित और ऊर्ध्वमुखी बनाने के कारण धर्म एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक प्रथा है।

भाषा और संस्कृति– विचारों, भावों और संदेश–सम्प्रेषण की पद्धति को भाषा कहते हैं। भाषा के बिना समाज और संस्कृति का कोई अर्थ नहीं। यदि मानव में भाषा–निर्माण की क्षमता न होती तो वह आज अपने इस रूप में न होकर गीदड़ या लोमड़ी की जाति का वन्य पशु होता। भाषा संस्कृति को व्यक्त करती

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

है। संस्कृति के प्रचार और प्रसार के लिए भाषा एक सशक्त माध्यम है। व्यक्ति के मानसिक जगत में जो कुछ उन्नति के विधायक संकल्प हैं, वे सब संस्कृति के अंग हैं। संस्कृति अपनी अभिव्यक्ति के लिए अनुकूल भाषा का निर्माण कर लेती है। संस्कृति की गरिमा, औदात्य, पवित्रता एवं शक्ति भाषा में प्रतिबिम्बित होती है। संस्कृति के सभी महत्वपूर्ण पक्ष भाषा की कृपा पर आश्रित हैं। समस्त प्रकार की शिक्षा भाषा द्वारा ही संभव है। जिस प्रकार प्रत्येक देश की अपनी संस्कृति होती है, संस्कृति यदि साक्ष्य है तो भाषा उसका साधन है। इस प्रकार भाषा और संस्कृति का घनिष्ट संबंध है।

साहित्य और संस्कृति– साहित्य में कवि या लेखक के व्यक्तिगत तथा सामाजिक अनुभवों, दार्शनिक या आध्यात्मिक विचारों, प्रेम–भावना, सौन्दर्यबोध आदि की अभिव्यक्ति होती है। इन सबके साथ संस्कृति का गहन सम्बन्ध है, क्योंकि सांस्कृतिक चेतना तथा चिन्तन की प्रतीक मूलक कृतियों में ही वह प्रकाश पाती है। किसी भी जाति के साहित्य में उस जाति की संस्कृति के स्तर का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। जिस जाति की संस्कृति जितनी उन्नत और उज्जवल होगी; उस जाति का साहित्य भी उतना ही उन्नत और प्रांजल होगा। साहित्य और समाज के अनिवार्य सम्बन्ध की तरह संस्कृति और साहित्य का सम्बन्ध भी संश्लिष्ट होता है। वास्तव में देखा गया है कि साहित्य का आधार पाकर संस्कृति की ऐतिहासिक प्रगति मुख्यता प्रतीकात्मक लेखों अथवा ग्रंथों के रूप में ही सुरक्षित रहती है। अतः कहा जा सकता है कि साहित्य संस्कृति का संवाहक भी है और संवर्धक–सम्प्रेषण भी। सांस्कृतिक धरोहर साहित्यिक कृतियों में व्यक्त होकर अमरत्व ग्रहण करती है और साहित्य सांस्कृति सन्निवेश से सशक्त, समुन्नत, प्रभावकारी और दीर्घजीवी बनता है।

कला और संस्कृति– यद्यति कलाओं में काव्य–कला को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। फिर भी सांस्कृतिक दृष्टि से मूर्तिकला, चित्रकला, भवन–निर्माण कला आदि के द्वारा उत्पन्न मूर्त सौन्दर्य–भावना से संस्कृति की काया पुष्ट होती है। ललित कलाओं में संस्कृति का स्वरूप स्पष्ट झलकता है। कला का निर्माण कला की प्रक्रिया, कला के रूप में, कला का सौन्दर्यबोध एवं कला का आनंद, संस्कृति के अभिव्यक्त रूप हैं। कलाओं के प्रोत्साहन से मानवीय वृत्तियों का परिष्कार होता है जो कि संस्कृति–बोध के लिए आवश्यक है। कलाओं के माध्यम से किसी युग–विशेष की संस्कृति भावी युगों के लिए धरोहर बन जाती है। अजन्ता–एलोरा आदि गुफाएँ आज भी भारतीय संस्कृति की महानता की कहानी कह रही हैं। नृत्य, नाटक और संगीत आदि कलाएँ मानव–मन की कलुषताओं का शमन करती हैं और इस प्रकार संस्कृति बनती है। किन्तु ये नहीं समझना चाहिए कि कला ही संस्कृति है। वास्तव में कला संस्कृति का एक महत्वपूर्ण पक्ष है किन्तु यहीं यह ध्यातव्य है कि जब तक कला की रचना या निर्माण में संस्कृति के आदेशों की प्रेरणा ली जाती है तब तक

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

ही वह संस्कृति के एक रूप का प्रतिनिधित्व करती है। संस्कृति से विमुख कला का कोई महत्व नहीं रह जाता।

समाज और संस्कृति– सामाजिक परिघटनाओं–सम्बन्धों, संस्थाओं, संगठनों, सामाजिक समूहों तथा भौतिक और बौद्धिक तत्वों की एक विशेष व्यवस्था को समाज कहते हैं। संस्कृति का अस्तित्व समाज में होता है; समाज के बिना इसकी कोई कल्पना भी नहीं की जा सकती। संस्कृति का निर्माण और विकास समूह या समाज के मनुष्यों के मिल–जुलकर काम करने की जरूरी शर्त पर ही आधारित होते हैं। संस्कृति का क्षेत्र ऐसा है जिससे सामाजिक जानकारी संचित करने का प्रयन्त किया जाता है। जहाँ यह सत्य है कि सांस्कृतिक उत्कर्ष के प्रतिमान एक विशेष ढंग से जातीय चेतना में रहते हैं और उसकी सम्पत्ति होते हैं। व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक सम्बन्धों; राजनीतिक, धार्मिक, साहित्यिक और व्यापारिक संस्थाओं तथा संगठनों, विभिन्न वर्गों और समूहों एवं अन्य भौतिक तथा बौद्धिक तत्वों में जातीय संस्कृति प्रतिफलित होती है। सामाजिक आचार–विचार और विभिन्न संस्थाओं का क्रमबद्ध इतिहास संस्कृति के अध्ययन में निश्चित रूप से सहायक होता है। परिवार सामाजिक संगठन की एक इकाई है और पारिवारिक व्यवहार का स्वरूप संस्कृति द्वारा निर्धारित होता है।... संस्कृति एक सांचा और एक निर्देशन है, निर्देशन मूल्यों और विचारों की समष्टि है। अतः संस्कृति और सामाजिक संगठन अन्योन्याश्रित है। समाज के जीवन का सृजनात्मक धर्म ही संस्कृति है, संस्कृति और समाज अभिन्न हैं समाज के जीवन का व्यापक धर्म ही संस्कृति कहलाता है। समाज गुणों और अवगुणों दोनों की समष्टि का नाम है किन्तु संस्कृति के अंतर्गत सृजनात्मक विचारधारा को ही मान्यता प्राप्त है। यह एक सार्वभौमिक सामाजिक प्रत्यय है।

प्रेम, सौन्दर्य और संस्कृति– किसी वस्तु के प्रति विशिष्ट प्रकार का लगाव ही प्रेम है। प्रेम वासनात्मक भी होता है और सात्विक भी। संस्कृति मानव की वासनाओं का परिष्कार करती है। सात्विक प्रेम की प्रतिष्ठा करना ही संस्कृति का लक्ष्य है। मानव की भावना का उदात्तीकरण करके विश्व भर में मैत्री और परस्पर सौहार्द की प्रतिष्ठा करना ही संस्कृति का कार्य है। प्रेम की यह भावना अनेक रूपों में दृष्टिगोचर होती है। व्यक्तिगत प्रेम, दाम्पत्य प्रेम, जाति प्रेम, देश–प्रेम, प्रकृति–प्रेम, ईश्वर–प्रेम, विश्व–प्रेम, आदि उसके विविध रूप हैं। किन्तु जहाँ प्रेम है वहाँ घृणा भी है; जहाँ राग है वहाँ द्वेष भी है, जहाँ सौन्दर्य है वहाँ कुरूपता भी है। इन विरोधी भावों के कारण प्रेम की गति अवरूद्ध होती है। गति ही अवरूद्ध नहीं होती, कई बार तो घृणा, द्वेष, निर्ममता, कठोरता आदि का ही साम्राज्य स्थापित हो जाता है। संस्कृति इन दुष्प्रवृत्तियों

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

का निराकरण करने की क्षमता रखती है। वह समय–समय पर मानव जाति को इस प्रकार के अन्धकारमय वातावरण से उबारने के लिए 'प्रकाश–स्तम्भ' का काम करती आई है।

आध्यात्मिकता और संस्कृति– 'अध्यात्म' का अर्थ है– आत्मा का चिंतन। गीता में उदात्त मानसिक भाव अथवा स्वभाव को ही अध्यात्म कहा गया है। किन्तु निरन्तर अभ्यास से ही कोई भाव या विचार हमारे स्वभाव का अंग बन सकता हौ। इसलिए निरंतर आत्म–चिंतन के अभ्यास से जिस स्वच्छ स्वभाव की प्राप्ति होती है वही अध्यात्म है। सुमित्रानन्दन पंत ने संस्कृति के अंतर्गत 'जीवन के सूक्ष्य–सूिल धरातलों के सत्यों का समावेश' मानते हुए उसमें ऊर्ध्व चेतना शिखर का प्रकाश और समदिक जीवन की मानसिक उपत्यकाओं की छाया के गुंफन होने का मत व्यक्त किया है। उनके शब्दों में उसके भीतर अध्यात्म, धर्म नीति से लेकर सामाजिक रूढ़ि–रीति तथा व्यवहारों का सौन्दर्य भी एक अंतर ग्रहण कर लेता है।'

नैतिकता, मानव–मूल्य और संस्कृति– नैतिकता, किसी समाज विशेष के आचार–व्यवहार सम्बन्धी उन नीतियों अथवा नियमों को कहते हैं, जिनके प्रकाश में उस समूह या समाज के व्यक्ति अपने उद्देश्यों की पूर्ति मार्ग में खोजते हैं। नीतियों का पालन नैतिकता और इसके विपरीत आचरण को अनैतिकता कहा जाता है। भारत में विवाहपूर्व स्त्री और पुरुष के मिलन को अनैतिक समझा जाता है। जबकि पश्चिम के अधिकांश देशों में इसे आवश्यक माना जाता है। वास्तव में हमारे वे समस्त कार्य नैतिक हैं जो व्यक्तिक, जाति या राष्ट्र की भलाई को ध्यान में रखकर किए जाएँ। नैतिक मापदण्डों को जीवन–मूल्य भी कहा जाता है। प्रवृत्तिगत जीवन से ऊपर उठाकर मानव–जीवन का उन्नयन करने वाले तत्त्वों को मूल्य कहते हैं। दया, करूणा, प्रेम–मैत्री, त्याग, अंहिसा, आदि ऐसे ही मानवीय मूल्य हैं। नैतिकता और मानव–मूल्यों को धारण करने के कारण धर्म ही संस्कृति का सर्वोच्च मूल्य माना जाता है। मानव जीवन को परिष्कृत, प्रकाशित, संयमित बनाना संस्कृति का प्रयोजन है। नैतिकता और मानव–मूल्यों के माध्यय से ही संस्कृति अपने उद्देश्य में सफल होती है।

संस्कृति एवं सांस्कृति चेतना

संस्कृति के अर्थ, विस्तार और प्रकृति के अध्ययन के पश्चात् यह जानना अत्यावश्यक है कि भारतीय संस्कृति का स्वरूप कैसा है और उसकी प्रकृति कैसी है। पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि– भारतीय संस्कृति की अपनी निजी विशेषताएँ हैं। ये विशेषताएँ भारतीय संस्कृति को वैश्विक संस्कृति से पृथक करती हैं। इन विशेषताओं का आधार वेद, उपनिषद, पुराण और मनुस्मृति जैसे ग्रंथ हैं। इन ग्रंथों में वर्णित सूत्रों और संकेतों के आधार पर भारतीय संस्कृति की रचना हुई है। इन सूत्रों में वर्ण व्यवस्था आश्रम

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

व्यवस्था की अवधारणा, पुरुषार्थ, ऋण, संस्कार, कर्म सिद्धान्त आदि परिगणित हैं। इनका संक्षिप्त वर्णन निम्नानुसार है :

वर्ण व्यवस्था

जाति एवं वर्ण भारतीय सामाजिक संगठन के दो महत्वपूर्ण तत्व है। यद्यपि कई बार कई लोग दोनों को एक ही समझने की भूल करते हैं। वास्तव में, दोनों व्यवस्थाओं में तथा दोनों की अवधारणाओं में अन्तर है। भारत की मूलभूत सामाजिक व्यवस्था वास्तव में वर्ण व्यवस्था ही थी, जाति–व्यवस्था नहीं थी।

सांस्कृति चेतना

समाज द्वारा सर्वस्वीकृत तथा सर्वमान्य परम्पराओं, आस्थाओं, विश्वासों और मर्यादाओं के प्रति अपनी प्रतिबद्धता और सम्मान प्रदर्शित करना ही सांस्कृति चेतना है। संस्कृति किसी भी राष्ट्र की अस्मिता होती है। इस अस्मिता की रक्षा करना प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य होता है। मध्यकाल में मुगल देश ही अस्मिता के इन चिह्नों का विनष्टीकरण कर रहे थे। जनसाधारण असहाय था। ऐसे समय में शिवाजी महाराज और बुन्देलखण्ड में महाराज छत्रसाल ने मुगलों से लोहा लेकर संस्कृति की रक्षा की। भारतीय संस्कृति का ह्रास अँग्रेजी शासन काल में भी कम नहीं हुआ। विदेशों में भारत की सांस्कृति छवि अच्छी नहीं थी। यूरोपियन लोग भारतीयों को हेय दृष्टि से देखते थे। ऐसे समय में स्वामी विवेकानन्द ने भारतीय संस्कृति को संरक्षित करने का कार्य किया। स्वामीजी के प्रदेय को रेखांकित करते हुए प्रो0 भरत कुमार तिवारी लिखते हैं कि– स्वामी विवेकानंद ने हिंदू धर्म का इस आधार पर समर्थन किया कि वह नैतिक मानववाद और आध्यात्मिक आदर्शवाद का एक सार्वभौम संदेश है। वह हिंदू धर्म को न केवल मानव धर्म वरन सनातन धर्म मानते थे अतः उसका प्रतिपादन सनातन अर्थों में किया। ईसाई धर्म प्रचारकों ने हिंदू धर्म के विरुद्ध अत्यंत भ्रांतिपूर्ण धारणाएँ फेला रखी थीं, ये लोग साम्राज्यवादी भावग्रंथि के शिकार थे और समझते थे कि ईश्वर ने काले तथा पीले लोगों को सभ्य बनाने का भारत हमारे सिर पर रखा है, किंतु वस्ततः वे इस प्रकार के प्रचार के द्वारा एशिया तथा आफ्रीका के आर्थिक शोषण का मार्ग प्रशस्त करना चाहते थे। 1870 के बाद आधुनिक साम्राज्यवाद का जो उदय हुआ उसके अध्ययन से उक्त कथन की पुष्टि होती है किंतु विवेकानंद के लिए हिंदू धर्म एक ऐसा व्यापक सत्य था जो न्याय सांख्य और वेदांत के द्वारा अपने हृदय में गंभीरतम दार्शनिक प्रतिभा को शरण दे सकता था, जो मनोवैज्ञानिकों को राजयोग के मनोवैज्ञानिक ज्ञान का भंडार दे सकता था, जो सामवेद के मंत्रों तथा तुलसीदास एवं दक्षिण के आलवार नयनार संप्रदाय के संतों के भजनों द्वारा भक्तों को प्रेरणा दे सकता था और जो वीर कर्मयोगियों को गीता में श्रीकृष्ण द्वारा प्रतिपादित निष्काम

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

कर्मयोग का संदेश दे सकता था। विवेकानंद की दृष्टि में हिंदू धर्म उन दुरुहपंथों, कर्मकांडी अंधविश्वासों, परंपरागत मतवादों और आदिम कर्मकांड का पुंज नहीं था जिन्हें देखने के लिए पल्लवग्राही यूरोपीय आलोचक दुर्भाग्यवश सदैव इच्छुक रहता है। उनकी दृष्टि में हिंदू धर्म मानव जाति के उद्धार के लिए नैतिक तथा आध्यात्मिक विधानों और आदिजाद कालनिरपेक्ष नियमों की संहिता था।

संस्कृति का वर्तमान स्वरूप

समय परिवर्तनशील है। समय परिवर्तन के साथ साथ संस्कृति के स्वरूप में भी परिवर्तन होते रहते हैं। समय के अनुसार कुछ पांरपरिक मूल्यों में परिवर्तन होता रहता है। कुछ अनुपयोगी होने के कारण स्वतः नष्ट हो जाते हैं तो कुछ नये मूल्य उसमें जुड़ते जाते हैं। प्रत्येक समाज की अपनी एक परम्परा होती है। प्रत्येक समाज की अपनी एक संस्कृति होती है। प्रत्येक समाज की अपनी एक सांस्कृतिक पहचान रहती है। भारतीय समाज अत्यन्त प्राचीन है। उसकी संस्कृति का इतिहास भी अति प्राचीन है। प्राचीनता के साथ–साथ निरन्तरता भारतीय समाज एवं संस्कृति का एक उत्कट लक्षण है। कई संस्कृतियाँ एवं सभ्यताएँ जन्म लेकर इतिहास में विलीन हो गईं, परन्तु भारतीय संस्कृति, समाज एवं संस्थाएँ आज भी अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं। परन्तु इस निरन्तरता में जड़ता या स्थिरता नहीं है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है। गतिशीलता स्वाभाविक है। भारतीय समाज में, उसकी संस्कृति में, उसकी सभ्यता में भी परिवर्तन हुए हैं। कई विदेशी संस्कृतियों ने भारत में प्रवेश किया। भारतीय समाज ने उनको आत्मसात करके भी अपनी सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखा। प्राचीन समय से आज तक का इतिहास भारतीय समाज की गतिशीलता एवं परिवर्तनों का इतिहास रहा है।

प्राचीन काल

भारतीय समाज का प्राचीन युग वेदों एवं पुराणों का युग रहा है। आध्यात्मिकता प्रधान यह युग भारतीय समाज का स्वर्णिम युग था। भारत इस युग में सोने की चिड़िया के नाम से जाना जाता था।

वर्ण, आश्रम, पुरुषार्थ, संस्कार आदि यहाँ की सांस्कृति पहचान थे। सामूहिकता की भावना पर आधारित थी यहाँ की संयुक्त परिवार प्रणाली। विवाह एक संस्कार माना जाता था। गुण–कर्ममूलक वर्ण व्यवस्था समाज का आदर्श थी। जीवन को व्यवस्थित रूप से व्यतीत करने के लिए आश्रम व्यवस्था थी। धर्म सम्मत जीवन व्यतीत कर अन्तिम लक्ष्य प्राप्त करने के लिए पुरुषार्थों का प्रावधान था। धर्म की मार्गदर्शक तत्व के रूप में प्रधानता थी। नैतिकता जीवन का लक्ष्य थी एवं कर्त्तव्यों का पालन जीवन का उत्कृष्ट मार्ग

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

था। इस युग का समाज समता का समाज था। जो सम्पन्न था वह अपनी संपत्ति का संरक्षक मात्र था। परहित एवं लोग कल्याण ऐसे संरक्षकों का नैतिक कर्त्तव्य था।

निष्कर्ष

संस्कृति का परिभाषा, स्वरूप, भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ, भारतीय संस्कृति का वैश्विक परिदृश्य और भारतीय संस्कृति के परिवर्तित परिदृश्य को इस अध्याय में समझने का प्रयास किया गया है। संस्कृति जीवन की विधि है। संस्कृति हमारे जीने और सोचने की विधि में हमारी अंतःस्थ प्रकृति की अभिव्यक्त है। सभ्यकता और संस्कृति को समानार्थी समझ लिया जाता है, जबकि ये दोनों अवधरणाएं अलग–अल हैं। विद्वानों ने 'संस्कृति' शब्द की विभिन्न परिभाएं की हैं। परन्तु कोई सर्वमान्य परिभाषा अब तक नहीं मिल सकी है। पर यह स्पष्ट है कि 'संस्कृति' उन सम्यक चेष्टाओं का नाम है जिनके द्वारा मानव समूह अपने आंतरिक और बाह्य जीवन को, अपनी शारीरिक मानसिक शक्तियों को संस्कारवान, विकसित और दृढ़ बनाता है।

'संस्कृति' शब्द संस्कृत भाषा की धातु 'कृ' (करना) से बना है। इस धातु से 3 शब्द बनते हैं– 'प्रकृति' (मूल स्थिति), 'सस्कृति (परिष्कृत स्थिति) और 'विकृति' (अवनति स्थिति)। 'संस्कृति' का शब्दार्थ है– उत्तम या सुधरी हुई स्थिति यानी कि किसी वस्तु को यहां तक संस्कारित और परिष्कृत करना कि इसका अंतिम उत्पाद हमारी प्रशंसा और सम्मान प्राप्त कर सके।

संस्कृति के दो पक्ष होते हैं– (1) आधिभौतिक संस्कृति और (2) भौतिक संस्कृति।

सामान्य अर्थ में आधिभौतिक संस्कृति को संस्कृति और भौतिक संस्कृति को सभ्यता के नाम से अभिहित किया जाता है। संस्कृति के ये दोनों पक्ष एक–दूसरे से भिन्न होते हैं। संस्कृति आभ्यंतर है, इसमें परंपरागत चिंतन, कलात्मक, अनुभूति, विस्तृत ज्ञान एवं धार्मिक आस्था का समावेश होता है।

भारतीय संस्कृति का विकास धर्म का आधार लेकर हुआ है इसीलिए उसमें दृढ़ता है। भारतीय संस्कृति व्यक्ति को व्यक्तिगत देती है और उसे महान कार्यों के लिए प्रोत्साहित करती है किंतु व्यक्तित्व का चरम विकास यह सामाजिक स्तर पर ही स्वीकार करती है।

भारतीय संस्कृति विश्व की सर्वाधिक प्राचीन एवं समृद्ध संस्कृति है। अन्य देशों की संस्कृतियां तो समय की धारा के साथ–साथ नष्ट होती रही हैं किंतु भारत की संस्कृति आदिकाल से ही अपने परंपरागत अस्तित्व के साथ अजर–अमर बनी हुई है। इसकी उदारता तथा समन्वयवादी गुणों ने अन्य संस्कृतियों को समाहित तो किया है किंतु अपने अस्तित्व के मूल को सुरक्षित रखा है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

संस्कृति देश तथा समाज का प्रतिबिंब होती है। किसी भी समाज की संस्कृति उसके भूतकालीन तथा वर्तमान कालीन विकास को दर्शाती है। उसमें समाहित लक्षण उस देश को अन्य देशों से अलग एक विशिष्टता प्रदान करते हैं। भारतीय संस्कृति के लक्षण भारत को समूचे विश्व से प्रथक विशिष्ट स्थान देते हैं। भारतीय संस्कृति की विशेषताओं में प्राचीनता, स्थायित्व, सहिष्णुता, बहुकोणीय व्यवस्था, लचीलापन, कर्म तथा पुर्नजन्म का सिद्धांत, ऋण व्यवस्था, संयुक्त परिवार और अनेकता में एकता आदि प्रमुख हैं।

संदर्भ सूची

1. सदंर्भ के चार अध्याय : डॉ. रामधारीसिंह दिनकर, पृ0 14 लोक भारतीय प्रकाशन इलाहाबाद संस्क0 2058
2. वही; पृ0 17, प्रस्तावना
3. वही; पृ0 17–18
4. भारतीयता के अमर स्वर : संपा0– प्रो0 धनंजय वर्मा; पृ0 155 हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल संस्क0 2001
5. साहित्य, शिक्षा एवं संस्कृति : आचार्य नरेन्द्रदेव, पृ0 133 प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली संस्क0 1988
6. कल्याण (संस्कार अंक 2006) गीता प्रेस गोरखपुर पृ0 69
7. वही; पृ0 77
8. समकालीन हिंदी कहानी में सांस्कृतिक मूल्य : डॉ0 पद्मा शर्मा, पृ0 22 रजनी प्रकाशन बेस्ट कांतिनगर दिल्ली, संस्क0 2011
9. यजुर्वेद 7/14 सम्पा0 पं. श्री श्रीराम शर्मा आचार्य
10. स्मकालीन हिंदी कहानी में सांस्कृतिक मूल्य : डॉ. पद्मा शर्मा पृ0 24
11. भारत एक खोज : पं. जवाहर लाल नेहरू
12. मनुस्मृति 6/92
13. वाग्धारा : डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल; पृ0 21
14. भाषायी संस्कृति : गोपालदत्त; पृ0 107
15. भारतीय संस्कृति : डॉ. देवराज; पृ0 25
16. वही; पृ021
17. मूल्य मीमांसा : डॉ. गोविंद चंद पांडे; पृ0 186

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 5, May- 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

18. श्रीमद्भागवतगीता– 8/3

19. उत्तरा : सुमित्रानंदन पंत; पृ0 35

20. भारतीय संस्कृति : डॉ. देवराज; पृ0 233

21. वही; पृ0 127

22. भारतीयता के अमर स्वर : संपा0 प्रो0 धनंजय वर्मा; पृ0 136